International Journal of Advanced Educational Research
ISSN: 2455-6157; Impact Factor: RJIF 5.12
www.educationjournal.org
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 246-247

कौटिल्य, कालिदास और विशाखदत्त में राजस्व संग्रह और लोककल्याण

डॉ. दया शंकर तिवारी

एसोसियट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद पी.जी.कालेज, इलाहबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

कौटिल्य और मनु ने आय के अन्य साधनों के अन्तर्गत विजय में प्राप्त अश्व, गज, धन, राजाओं से उपहारस्वरूप प्राप्त वस्तुएँ तथा अर्थ दण्ड का उल्लेख किया। रघुवंश में वर्णन मिलता है विजय से राजा को अत्यधिक सम्पत्ति प्राप्त होती है। विजेता पराजित राज्यों से अश्व, गज, स्वर्ण के ढेर और बहुमूल्य उपहार प्राप्त करते हैं। जब कुश अपनी सेनाओं के साथ–अरण्य–जंगल से आगे बढ़ते हैं, तो विन्ध्याचलवासी किरातों द्वारा बहुमूल्य सामग्रियों भेंट की जाती है। इसी प्रकार मालविकाग्निमित्र में विदर्भ राज्य द्वारा भेजी गई वस्तुओं का उल्लेख मिलता है, जिनमें निपुण राजकुमारियाँ, भृत्य, अमूल्य रत्न, गज, अश्व सम्मिलित हैं–महासाराणि रत्नानि शिल्प कारिवाहनानिकाभूयिष्ठं परिजनमुपायनीकृत्य। विशाखदतत ने मुद्राराक्षस में उल्लेख किया है कि विभिन्न राजा आपस में संघ करके, जब शत्रु राज्य पर आक्रमण करते हैं तो उनका उद्देश्य अर्थ–संग्रह–इतरौ द्वौ कोषं हस्ति बलचेतिहोता है।

कोष–संग्रह की सीमाएँ–कौटिल्य का मत है कि उचित उपायों के द्वारा कोश का संग्रह करना चाहिए क्योंकि जब प्रजाजन क्षीण या दरिद्र हो जाते हैं तो उनमें लोभ की भावना जन्म लेती है। लोभ से असन्तोष उत्पन्न होता है एवं असन्तोष के कारण वे शत्रु के पक्ष का आश्रय लेते हैं और अपने राजा का विनाश कर देते हैं। उद्योगपूर्व में कहा गया है कि जिस प्रकार मधुमक्खी मधु निकाल लेती है किन्तु फूलों को बिना पीड़ा दिए छोड़ देती है उसी प्रकार राजाओं को मनुष्यों से बिना कष्ट दिए धन लेना चाहिए। मनु का मत है कि जिस प्रकार जों व बछड़ा एवं मधुमक्खी थोड़ा–थोड़ा करके अपनी जीविका के लिए रक्त, दूध या मधु लेते हैं उसी प्रकार राजा को अपने राज्य से वार्षिक कर के रूप में थोड़ा–थोड़ा भाग लेना चाहिए। याज्ञवल्क्यस्मृति में वर्णन मिलता है कि जो राजा अनुचित साधनों से कोश का संवर्धन करता है वह शीघ्र ही अपनी संपत्ति से वंचित हो जाता है। कालिदास ने उल्लेख किया है कि लोभवंश कोश का संवर्धन नहीं करना चाहिए। रघुवंश में वर्णन मिलता है कि राजा दिलीप लोभ छोड़कर धन का संचय करते हैं राजा रघु मिट्टी एवं सुवर्ण को समान समझते हैं अर्थात् लोभवश धन का संचय नहीं करते हैं। कालिदास ने वर्णन किया है कि राजा को उसी प्रकार कोश का संचय करना चाहिए जिस प्रकार सूर्य धरती से जल ग्रहण करता है– प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत। सहस्त्रगुणमुत्स्त्रष्टुमादते हि रसं रविः। विशाखदत्त ने उल्लेख किया है कि लोभवश धन का संग्रह नहीं करना चाहिए क्योंकि धन के लोभ से पुत्र पिता का तथा पिता पुत्र का वध कर देता है– पितृन् पुत्राः परवदभिहिंसन्ति पितरो। इस प्रकार कालिदास और विशाखदत्त दोनों ने उचित साधनों से कोश की वृद्धि का आग्रह किया है।

कल्याणकारी कार्य–कल्याणकारी कार्यों का उल्लेख धर्मसूत्रों में मिलता है। अर्थशास्त्र लोक–कल्याण की अवधारण पर आधारित है। कौटिल्य का मत है कि प्रजा के सुख में राजा का सुख तथा प्रजा के कल्याण में राजा का कल्याण निहित है– प्रजा सुखे सुखं राजः। मनुस्मृति में कहा गया है कि यदि राजा मोहवश अपनी प्रजा की चिन्ता न करके अपनी प्रजा को कष्ट देता है तो वह राजा जीवित अवस्था में ही बान्धव सहित राज्य से शीघ्र ही वंचित हो जाता है। शान्तिपर्व, कामन्दकीयनीतिसार में राजा के कल्याणकारी कार्यों का वर्णन किया गया है। कालिदास ने राजा के समक्ष प्रजा कल्याण का आदर्श रखा है। आभिज्ञानशाकुन्तल में कहा गया है कि राजा दुष्यन्त अपने सुख की इच्छा छोड़कर प्रजा के कल्याण में लगे रहते हैं–स्वसुख निरभिलाषाः खिद्यसे लोकहेतोः। मालविकाग्निमित्र ग्रन्थ में कहा गया है कि प्रजा के कष्टों का निवारण जैसी एक भी इच्छा नहीं है जो अग्निमित्र के रक्षक रहते हुए पूरी न की जाती हो। रघुवंश में प्रजा के कल्याण में लगे हुए राजाओं का उल्लेख मिलता है– राजा प्रजा रन्जनलब्धवर्णः। विशाखदत्त ने प्रजा के सुख को राजा का सर्वोपरि कर्तवय माना है जगदानन्द हेतुना।

कालिदस ने प्रजा के कल्याण को दृष्टि में रखकर किए जाने वाले विभिन्न कार्यों का उल्लेख किया है। रघुवंश में उल्लेख मिलता है कि राजा प्रजा की कृषि की रक्षा करता है तथा प्रजा के कल्यण के लिए सेतु का निर्माण करता है। कालिदास ने अपनी रचनाओं में राजमार्गों का उल्लेख किया है अतः ऐसा प्रतीत होता है कि राजा आवागमन को दृष्टि में रखकर सड़कों का निर्माण करवाता है। राजा प्रजा के लिए अन्न, जल, वस्त्र एवं शिक्षा का प्रबन्ध करता है। रघुवंश में यह उल्लेख किया गया है कि राजा प्रजा के प्राप्त धन का विनियोजन उसके विकास कार्यों के लिए करता है। कालिदास ने इस बात का भी उल्लेख किया है कि राजा सभी प्रकार की दैवी और मानवीय आपदाओं से प्रजा की रक्षा करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि राजा बाढ़, दुर्भिक्ष एवं महामारियों के समय प्रजा की सहायता करता है–

दैवीनां मानुषीणां च प्रतिहर्ता त्वमापदाम्। कालिदास ने राजा दशरथ के राज्य का उल्लेख किया है जिनके राज्य की सीमाओं में रोग प्रवेश नहीं करता है। विशाखदत्त ने राजा के कल्याणकारी कार्यों का उल्लेख किया है। मुद्राराक्षस में राजमार्ग तथा राजकीय उद्यानों का उल्लेख मिलता है जिनका निर्माण राजा प्रजा के हित को दृष्टि में रखकर करता है। राजा नन्द दुःखी स्त्रियों के कष्टों का निवारण करते हैं तथा शरण में आये हुए अनाथ लोगों की सहायता करते हैं–स्त्रीजनं, प्रतिदिन मनुकम्पन्ते।

प्राचीन भारत के विचारकों ने राजा के कल्याणकारी कार्यों को दृष्टि में रखते हुए राजा प्रजा के मध्य पिता पुत्र के सम्बन्धों का उल्लेख किया है। अशोक के शिलालेखों में इसका वर्णन किया गया है। कौटिल्य ने राष्ट्रीय आपदाओं जेसे अग्नि, बाढ़ का वर्णन करते समय इस पर बल दिया है कि राजा को पिता के समान पीड़ित लोगों के प्रति उदारतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए। स्मृतियों में राजा एवं प्रजा के मध्य पिता–पुत्र के सम्बन्ध का वर्णन मिलता है। इसी प्रकार का उल्लेख शान्तिपर्व तथा रामायण में किया गया है। कालिदास ने राजा और प्रजा के मध्य पिता–पुत्र का सम्बन्ध माना है, रघुवंश में वर्णन मिलता है कि जैसे पिता अपनी सन्तान को अनुचित कार्य करने से रोकता है, अच्छे कार्य की ओर प्रेरित करता है तथा सब प्रकार अपनी सन्तान का पालन–पोषण करता है उसी प्रकार राजा दिलीप अपने प्रजा के कल्याण की दृष्टि से कार्य करते

हैं अतः वे अपनी प्रजा के सच्चे पिता हैं– स पिता पितरस्तासां। कालिदास के आदर्श राजा राम प्रजा की प्रसन्नता में अपनी प्रसन्नता समझते हैं, वे विघ्न–बाधाओं को दूर करते हैं, लोगों को सद्आचरण करने के लिए प्रेरित करते हैं, अतः सभी लोग उन्हें पिता तुल्य मानते हैं। आभिज्ञानशाकुन्तल में वर्णन मिलता है कि राजा अपनी सन्तान के समान प्रजा का कार्य करते हैं– प्रजाः प्रजाः स्वा इव तन्त्रयित्वा निषेकते शान्मना विविक्तम्। विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस में राजा एवं प्रजा के मध्य पित्रवत् व्यवहार का उल्लेख किया है, सेवक होने के कारण अपमान का पात्र होकर भी केवल उनके स्नेहवश हम निरन्तर पुत्रवत् रहते आये हैं– पुत्रेभ्यः कृतवेदिनां कृतधियां येषामभिन्नावयम्। राजधर्म का उद्देश्य–धर्मशास्त्र एवं अर्थशास्त्र दोनों के अन्तर्गत राजधर्म के उद्देश्य का वर्णन किया गया है। योरोपीय विद्वानों ने राज्य के उद्देश्य के सम्बन्ध में विभिन्न समयों में विभिन्न बातों का उल्लेख किया है। कौटिल्य के अनुसार राजधर्म का उद्देश्य ऐसी दशायें और वातावरण उत्पन्न करना है जिसके अन्तर्गत सभी शांतिपूर्ण एवं सुखमय जीवन व्यतीत कर सकें, लोग अपने–अपने व्यवसाय, परम्पराओं एवं धर्म का पालन कर सकें। अपने कर्मों एवं अर्जित संपत्ति का शान्तिपूर्वक उपभोग कर सकें। वास्तव में राजा शान्ति, सुव्यवस्था एवं सुख की दशाओं के सृजन करने का साधन है जिसका साध्य प्रजा का कल्यण है। वर्तमान समय में लोक कल्यणकारी राज्य की अवधारणा तथा प्रजातन्त्र के आदर्श का उद्देश्य लोककल्याण माना गया है। कालिदास ने अपनी रचनाओं में शान्ति, सुव्यवस्था एवं प्रजा के वैभव का उल्लेख किया है, रघुवंश में उल्लेख मिलता है सड़कें तथा राजपथ सुरक्षित हैं। पर्वतों, वनों एवं नदियों द्वारा देश–विदेश में व्यापारिक समूह निश्चिंत होकर विचरण करते हैं। कवि कहता है कि राजदण्ड के भय से पवन भी उद्यानों में मदिरापान कर सोई हुई स्त्रियों के वस्त्र को स्पर्श करने का साहस नहीं करता है। अपने राजनीतिक तथा धार्मिक कार्यों के द्वारा सद्मार्ग पर चलता हुआ राजा भौतिक तथा दैविक आपदाओं का दमन करता है। अतः सभी प्रकार के दोष तिरोहित हो जाते हैं, किसी प्रकार अमंगल की छाया प्रजा पर नहीं पड़ती हैं। इस प्रकार सुख और वैभव से भरा हुआ राज्य पृथ्वी पर स्वर्ग बन जाता है–महीतलस्पर्शनमात्रभिन्नमृद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः। मालविकाग्निमित्र में प्रजा में विप्लव से मुक्ति की कामना की गई है। इसी प्रकार विक्रमोवर्शीय ग्रन्थ में कहा गया है समस्त अमंगल दूर हो, सभी लोगों की मनोकामनाएँ पूरी हों तथा सर्वत्र सुख ही सुख व्याप्त हो जाय। अभिज्ञानशाकुन्तल में प्रजा के कल्यण, विद्वानों के सम्मान के आदर्श की कल्पना की गई है। विशाखदत्त ने राजधर्म का उद्देश्य प्रजा की समृद्धि, सुख, शान्ति एवं कल्यण की भावना माना है। राजदण्ड के भय से लोग सवधर्म का पालन करते हैं तथा राज्य में छलपूर्ण आचरण का अभाव है– अपरिग्रहनाम्। पुराणों में भी इसी प्रकार के विचार मिलते हैं।

संदर्भ

1. मुद्रा0 7:18
2. विन्टरनित्स, एम0 पृ0 31
3. कौ0 1:4, 15
4. महाभारत–शान्तिपर्व 150:3, सभा0 22:24, वन0 115:12
5. मनु0 7:27, 28
6. शाकु0 1:11, आर्तत्राणाय वः शस्त्रं न प्रहर्तुमनागसि
7. रघु0 14:73
8. मुद्रा0 अंक 6 पृ0 434
9. कौ0 4:1, नारद0 1:11–11
10. काणे पी0वी0 धर्मशास्त्र का इतिहास भाग 2 पृ0 713
11. गौतम0 11:25 अपरार्क पृ0 599
12. गौतम0 29:46–47, वशिष्ठ 3:20
13. कौ0 1:19
14. याज्ञ0 2:1, मनु0 8:1–2, मनु0 8:11
15. शुक्र0 4:5:9:11